दिल्ली से लौटे हैं कल टिकट मार के
खिले हैं दाँत ज्यों दाने अनार के
आये दिन बहार के।

बैसे तो नागार्जुन के व्यंग्य प्रायः सीधे होते हैं पर कहीं-कहीं नागार्जुन अपना अद्भुत कौशल दिखाते हैं। कविता के प्रचलित रूप को तोड़कर ऐसा नगापन पैदा करते हैं कि उनका लोहा मान लेना पड़ता है। नागार्जुन की कविता ऐसे स्थलों पर एक पूरी स्थिति को मूर्त कर देती है या फिर व्यंग्य को बहुत तीक्ष्ण बना देती है। 'अकाल और उसके बाद' शीर्षक कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में एक पूरी वास्तविकता दृश्य बन गयी है—

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोयी उसके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त
दाने आये घर के अन्दर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन के ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठीं घर-भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलायी पाँखें कई दिनों के बाद

कहा जा चुका है कि कविता के प्रचलित रूप को तोड़कर उसे एक नया कलेवर दे देने का अद्भुत कौशल नागार्जुन के पास है। जिन चीजों में और जिन शब्दों में कविता की कोई सम्भावना नहीं उनमें भी एक सशक्त कविता पैदा कर देना नागार्जुन की अपनी विशेषता है। इसके उदाहरण के लिए नागार्जुन की दो प्रसिद्ध कविताओं को पढ़ना आवश्यक है। पहली कविता है 'पाँच पूत भारत माता के' और दूसरी है 'मन्त्र कविता'। नीचे दोनों के अंश उद्धृत हैं—

पाँच पूत भारतमाता के दुश्मन था खूंखार
गोली खाकर एक मर गया बाकी रह गये 4
चार पूत भारतमाता के चारों चतुर प्रवीन
देश निकाला मिला एक को बाकी रह गये 3
तीन पुत्र भारतमाता के लड़ने लग गये वो
अलग हो गया उधर एक अब बाकी रह गये 2
दो बेटे भारतमाता के छोड़ पुरानी टेक
चिपक गया है इक गद्दी से, बाकी रह गया 1
एक पुत्र भारतमाता का, कन्धे पर है झण्डा
पुलिस पकड़ के जेल ले गयी, बाकी रह गया ०

'मन्त्र' कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

ओं भाषण…
ओं प्रवचन…
… … …
ओं नारे और नारे और नारे और नारे
ओं सब कुछ, सब कुछ, सब कुछ
ओं कुछ नहीं, कुछ नहीं, कुछ नहीं
… … …
ओं एतराज, आक्षेप, अनुशासन
ओं गद्दी पर आजन्म व्रजासन
… … …
ओं ऐं ह्रीं क्लीं हूँ आङ्
ओं हम चबायेंगे तिलक और गांधी की टाँग
… … …
ओं दुर्गा दुर्गा दुर्गा तारा तारा तारा
ओं इसी पेट के अन्दर समा जाए सर्वहारा

नागार्जुन लोक-जीवन के कवि हैं। जन कवि हैं। उनकी भाषा बोलचाल की भाषा है। उसमें लोक-जीवन की शब्दावली बहुत है। गाँव के परिवेश की चीजों के नाम उनकी कविता में बहुत मिलेंगे। कहीं पेड़ों के नाम। कहीं मछलियों के नाम। नागार्जुन को अपनी धरती का मोह बार-बार उमड़ता है। अपने गाँव से बिछुड़ने की पीड़ा उन्हें सालती रहती है। उनकी कई कविताओं में इस पीड़ा और इस मोह को अभिव्यक्ति मिली है। 'सिन्दूर-तिलकित भाल' शीर्षक कविता में नागार्जुन को अपने स्वजनों की स्नेह-भरी आँखें याद आती हैं। अपना तरउनी गाँव याद आता है। मिथिला का वह भूभाग याद आता है जहाँ लीचियाँ हैं, आम हैं, धान है, कमल है, कुमुदिनी है, तालमखान है। 'ऋतुसन्धि' शीर्षक कविता में कवि को अपने गाँव की बरसात याद आती है। वाग्मती की धारा और पोखरों के कुमुद-पद्म मखान याद आते हैं। 'एक मित्र को पत्र' शीर्षक कविता में कवि याद करता है कि वाग्मती-कमला और गण्डक-कोसी अंचलों में मकई-मड़ुआ, साम-कावन, धान-गम्हड़ी आदि की बुवाई हो रही होगी। 'बहुत दिनों के बाद' शीर्षक कविता में कवि लिखता है—

बहुत दिनों के बाद
अब की मैं जी-भर छू पाया
अपनी गँवई पगडण्डी की चन्दनवर्णी धूल
बहुत दिनों के बाद
बहुत दिनों के बाद
अब की मैंने जी-भर तालमखाना खाया

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

गन्ने चूसे जी-भर
वहुत दिनों के वाद।

धरती को नागार्जुन ने माँ कहा है। भारतीय ऋषियों, कवियों-चिन्तकों ने बहुत प्राचीन काल से धरती को माँ के रूप में देखा है। वह आधार है। वही जन्म देती है, वही पालन करती है। नागार्जुन ने इस धरती को विनाशक वैज्ञानिक अस्त्रों से वचाने की इच्छा व्यक्त की है। युद्धों का विरोध करते हुए वे लिखते हैं—

पौधों या पेड़ों में कभी नहीं फली हैं छुरियाँ
कन्द की जड़ से कभी नहीं निकला है विस्फोटक वम
चर कर घास गाय ने दूध के वदले नहीं दिया हलाहल
सोख कर धरती का रस जहर नहीं वरसा कभी भी वादल
निछावर हम इस पर
तुम्हारी नहीं, हमारी है धरती
सुनो हे वज्रपाणि युद्धव्यसनी दानव
सुनो हे अशोभन अमंगल अघायु
तुम्हारा अपावन स्पर्श नहीं चाहती
अहल्या कल्याणी चिरकुमारी धरती

धरती के प्रति यह पूज्य भाव नागार्जुन की कविता को महान बनाता है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, नागार्जुन की कविता की शक्ति भारतीय निम्नमध्यवर्गीय जीवन को पूर्ण सहानुभूति के साथ चित्रित करने में है। मगर यहाँ यह उल्लेख करना जरूरी है कि नागार्जुन ने राजनीतिक कविताएँ भी वहुत लिखी हैं और ये कविताएँ उनकी असफल कविताएँ हैं। इनकी असफलता का कारण नागार्जुन की राजनीतिक समझ है। वे समय-समय पर अपनी राजनीतिक विचारधारा वदलते रहे हैं इसीलिए उनकी कविताएँ तात्कालिक राजनीतिक समझ से लिखी गयी हैं। इसके उदाहरण में उनकी 'अव तो वन्द करो हे देवी यह चुनाव का प्रहसन' शीर्षक कविता तथा 'पहल-8' में प्रकाशित कुछ कविताओं को साथ-साथ रखकर पढ़ा जा सकता है। उनकी कुछ और कविताओं को इन्हीं के साथ जोड़कर देखें तो पायेंगे कि उन्होंने कभी छापाकारों का समर्थन किया, कभी सम्पूर्ण क्रान्ति का और अव 'सम्पूर्ण क्रान्ति' को 'भ्रान्ति विलास' घोषित करते हैं। कहना न होगा कि यह भ्रान्ति नागार्जुन की राजनीतिक भ्रान्ति ही है। नागार्जुन ने जहाँ कहीं राजनीतिक अत्याचार का, तानाशाही का या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर युद्धों का विरोध किया है वहाँ तो उनकी कविताएँ अपना अर्थ रखती हैं लेकिन जहाँ नागार्जुन अपनी कविता को कुछ राजनीतिक व्यक्तियों से जोड़ देते हैं वहाँ वे राजनीतिक अवसरवाद से ग्रस्त होकर अपना व्यापक अर्थ खो देती हैं। नागार्जुन का व्यक्तित्व एक विवादास्पद व्यक्तित्व रहा है। उन्हें

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

'प्रगतिशील' भी कहा गया है, 'प्रतिक्रियावादी' भी और 'अवसरवादी' भी। दरअसल यह अन्तर्विरोध नागार्जुन में है भी। वे कालिदास, विद्यापति और तुलसी के भी प्रेमी हैं तथा अपने को कम्यूनिस्टों से भी जोड़ते हैं। रोमैण्टिक कविताएँ भी लिखी हैं उन्होंने और नारेबाजी वाली राजनीतिक कविताएँ भी। बयान भी बदले हैं बार-बार उन्होंने। लेकिन इस सन्दर्भ में एक बात स्पष्ट रहनी चाहिए कि नागार्जुन अपनी कविता में 'दल' के साथ तो नहीं मगर 'जन' के साथ बराबर बँधे रहे हैं। लोकजीवन और लोकमन को जितनी आत्मीयता से नागार्जुन ने व्यक्त किया है, किसी दूसरे आधुनिक हिन्दी कवि ने नहीं। कारण सिर्फ यह है कि वे स्वयं लोक के विभिन्न स्तरों से गुजरे हुए कवि हैं। देखा और भोगा है उन्होंने उन स्थितियों को, उस समूचे जीवन और भाषा-परिवेश को। इसीलिए उनकी कविता अपने पूरे विन्यास में—छन्द, लय, तुक हर दृष्टि से लोकजीवन की सच्ची कविता है। छन्द, लय, तुक आदि के क्षेत्र में उन्होंने अनेक नये प्रयोग भी किये हैं। वे भारतीय मिट्टी से जुड़े जनता के कवि हैं। उनके पास भाषा की अद्‌भुत शक्ति है। व्यंग्य करने में उनका मुकाबला कम कवि कर सकेंगे। भ्रष्ट व्यवस्था, पाखण्ड, शोषण, अन्धविश्वास आदि पर तिलमिलानेवाला व्यंग्य नागार्जुन करते हैं। व्यंग्य की यह शक्ति नागार्जुन में कबीर जैसी ही है। दोनों का भाषाबोध भी मिलता-जुलता है। नागार्जुन को जो जीवन्त भाषा मिली है वह जनता के बीच से ही मिल सकती है। कबीर को भी इसी तरह मिली थी, निराला को भी और प्रेमचन्द को भी।

सन्दर्भ

1. तालाब की मछलियाँ, पृ. 11, 158, 87

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner